



गीतांजलि चटर्जी के 'तीसरे लोग' में स्त्री-अस्मिता और सामाजिक संरचना

*डॉ. गीता संतोष यादव

*सहयोगी प्राध्यापिका, हिन्दी विभाग, एस.एम.आर.के. महिला महाविद्यालय, नाशिक, महाराष्ट्र, भारत।

सारांश

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न बहुआयामी स्वरूप ग्रहण कर चुका है। अब स्त्री-विमर्श केवल स्त्री पर होने वाले प्रत्यक्ष शोषण या लैंगिक भेदभाव की चर्चा तक सीमित नहीं है, बल्कि स्त्री के सामाजिक अस्तित्व, आत्मनिर्णय, पहचान, स्वतंत्रता, पारिवारिक संबंधों, आर्थिक स्थिति और सामाजिक स्वीकृति जैसे प्रश्नों को भी अपने केंद्र में रखता है। इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में गीतांजलि चटर्जी का उपन्यास 'तीसरे लोग' स्त्री के जीवनानुभवों और सामाजिक संरचना के अंतर्संबंध को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण कृति के रूप में देखा जा सकता है। उपन्यास में स्त्री की स्थिति को केवल व्यक्तिगत अनुभव के स्तर पर नहीं, बल्कि उन सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं के संदर्भ में समझने का अवसर मिलता है, जो उसके व्यक्तित्व और जीवन-निर्णयों को प्रभावित करती हैं। परिवार, सामाजिक मर्यादा, लैंगिक भूमिकाएँ, संबंधों की अपेक्षाएँ और सामाजिक स्वीकृति जैसे तत्व स्त्री-अस्मिता के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्त्री जब इन निर्धारित भूमिकाओं से आगे जाकर अपने अस्तित्व और अधिकारों को पहचानने का प्रयास करती है, तब उसके सामने सामाजिक संरचना के साथ टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है। 'तीसरे लोग' का शीर्षक भी सामाजिक मुख्यधारा और उसके हाशिये के बीच स्थित जीवन की ओर संकेत करता है। इस संदर्भ में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न और अधिक जटिल हो जाता है, क्योंकि स्त्री की सामाजिक पहचान अनेक स्तरों पर निर्मित और नियंत्रित होती है। प्रस्तुत आलेख में उपन्यास के संदर्भ में स्त्री-अस्मिता, सामाजिक संरचना, पितृसत्ता, पारिवारिक व्यवस्था, आत्मनिर्णय, हाशियाकरण और स्त्री-प्रतिरोध के प्रश्नों का विश्लेषण किया गया है।

मुख्य शब्द: स्त्री-अस्मिता, स्त्री-विमर्श, सामाजिक संरचना, पितृसत्ता, स्त्री चेतना, आत्मनिर्णय, हाशियाकरण, सामाजिक यथार्थ।

प्रस्तावना

साहित्य और समाज का संबंध अत्यंत गहरा और बहुआयामी है। साहित्य अपने समय के सामाजिक जीवन, मानवीय संबंधों, सांस्कृतिक मूल्यों और अंतर्विरोधों को अभिव्यक्त करता है। साथ ही वह उन स्थापित मान्यताओं पर प्रश्न भी उठाता है, जिन्हें समाज लंबे समय से स्वाभाविक या अपरिवर्तनीय मानता आया है। स्त्री के संदर्भ में साहित्य की यह भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि स्त्री की सामाजिक स्थिति लंबे समय तक ऐसी संरचनाओं से निर्धारित होती रही है जिनमें उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की अपेक्षा उसकी पारिवारिक और सामाजिक भूमिकाओं को अधिक महत्व दिया गया। आधुनिक हिंदी साहित्य में स्त्री की उपस्थिति और उसकी भूमिका में उल्लेखनीय परिवर्तन दिखाई देता है। स्त्री अब केवल पुरुष-केंद्रित कथा की सहायक पात्र नहीं है, बल्कि वह अपने अनुभवों, प्रश्नों, आकांक्षाओं और संघर्षों के साथ कथा के केंद्र में आती है। उसके लिए 'मैं कौन हूँ?' का प्रश्न उतना ही महत्वपूर्ण हो जाता है जितना 'समाज मुझे क्या मानता है?' यही प्रश्न स्त्री-अस्मिता की आधारभूमि निर्मित करता है।

स्त्री-अस्मिता का संबंध केवल व्यक्तिगत पहचान से नहीं है। व्यक्ति की पहचान जिस सामाजिक वातावरण में निर्मित होती है, वह

वातावरण उसकी स्वतंत्रता और सीमाओं को भी प्रभावित करता है। परिवार, विवाह, धर्म, परंपरा, अर्थव्यवस्था, शिक्षा और सामाजिक प्रतिष्ठा जैसी संस्थाएँ स्त्री के जीवन को अनेक स्तरों पर प्रभावित करती हैं। इसलिए स्त्री-अस्मिता को सामाजिक संरचना से अलग करके नहीं देखा जा सकता। गीतांजलि चटर्जी का 'तीसरे लोग' इसी संदर्भ में अध्ययन की माँग करता है। उपन्यास में सामाजिक मुख्यधारा से अलग या हाशिये पर स्थित जीवनानुभवों की उपस्थिति उसके शीर्षक को अर्थपूर्ण बनाती है। स्त्री की स्थिति को इस व्यापक सामाजिक संदर्भ में देखने पर यह प्रश्न सामने आता है कि सामाजिक संरचना व्यक्ति की पहचान को किस प्रकार निर्धारित करती है और स्त्री अपने लिए स्वतंत्र पहचान की जगह किस प्रकार तलाशती है। 'अस्मिता' का सामान्य अर्थ पहचान, अस्तित्व और अपने होने के बोध से है। स्त्री-अस्मिता का अर्थ उस चेतना से है जिसमें स्त्री स्वयं को केवल किसी संबंध या भूमिका के आधार पर नहीं, बल्कि एक स्वतंत्र मानवीय व्यक्तित्व के रूप में पहचानती है। परंपरागत समाज में स्त्री की पहचान प्रायः उसके पारिवारिक संबंधों से निर्धारित की जाती रही है। वह किसी की बेटी, पत्नी, माँ, बहू या बहन के रूप में पहचानी जाती है। इन संबंधों का अपना महत्व है, लेकिन समस्या तब उत्पन्न होती है जब इन्हीं भूमिकाओं को स्त्री की संपूर्ण पहचान

मान लिया जाता है और उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व, इच्छाओं तथा निर्णयों को गौण कर दिया जाता है।

स्त्री-अस्मिता इस सीमित पहचान का विस्तार करती है। इसमें स्त्री अपने जीवन के संबंध में निर्णय लेने, अपनी इच्छाओं को व्यक्त करने और अपने अस्तित्व को स्वयं परिभाषित करने की आकांक्षा रखती है। इसलिए स्त्री-अस्मिता मूलतः आत्मबोध और आत्मसम्मान से जुड़ी हुई अवधारणा है। 'तीसरे लोग' को इसी दृष्टि से पढ़ने पर स्त्री की पहचान का प्रश्न व्यक्तिगत अनुभव से आगे बढ़कर सामाजिक प्रश्न बन जाता है। स्त्री जिस सामाजिक वातावरण में रहती है, वही उसकी पहचान को स्वीकार या अस्वीकार करता है। इस प्रकार अस्मिता का संघर्ष सामाजिक स्वीकृति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच स्थित दिखाई देता है। सामाजिक संरचना से आशय समाज में मौजूद संस्थाओं, संबंधों, भूमिकाओं, मान्यताओं और सत्ता-संबंधों की उस व्यवस्था से है, जो व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करती है। परिवार, विवाह, शिक्षा, अर्थव्यवस्था और सामाजिक प्रतिष्ठा आदि इसके महत्वपूर्ण घटक हैं।

स्त्री के संदर्भ में सामाजिक संरचना का प्रभाव अधिक जटिल है। समाज स्त्री और पुरुष के लिए अलग-अलग भूमिकाएँ निर्धारित करता है। पुरुष से आर्थिक जिम्मेदारी, निर्णय और नेतृत्व की अपेक्षा की जाती है, जबकि स्त्री से देखभाल, त्याग, समायोजन और पारिवारिक जिम्मेदारी निभाने की अपेक्षा की जाती रही है। इन भूमिकाओं को जब प्राकृतिक या अपरिवर्तनीय मान लिया जाता है, तब लैंगिक असमानता को सामाजिक वैधता मिलती है। स्त्री के लिए निर्धारित भूमिका उसके व्यक्तित्व के विकास की संभावनाओं को सीमित कर सकती है। 'तीसरे लोग' के संदर्भ में सामाजिक संरचना का अध्ययन इसीलिए आवश्यक है कि स्त्री के संघर्ष को केवल व्यक्तिगत समस्या मानकर उसकी वास्तविक सामाजिक पृष्ठभूमि को नहीं समझा जा सकता। स्त्री जिन परिस्थितियों का सामना करती है, वे अनेक बार उसके व्यक्तिगत निर्णयों से अधिक व्यापक सामाजिक व्यवस्था से निर्मित होती हैं।

स्त्री-अस्मिता पर विचार करते समय पितृसत्ता की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण है। पितृसत्ता ऐसी सामाजिक व्यवस्था को कहा जाता है जिसमें परिवार और सामाजिक सत्ता के विभिन्न स्तरों पर पुरुष-प्रधान नियंत्रण को प्राथमिकता मिलती है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री से अपेक्षा की जाती है कि वह सामाजिक मर्यादाओं और पारंपरिक भूमिकाओं का पालन करे। उसके व्यवहार, वेशभूषा, संबंधों, इच्छाओं और जीवन-निर्णयों पर सामाजिक निगरानी बनी रहती है। पुरुष के लिए जो व्यवहार सामान्य या स्वीकार्य माना जा सकता है, वही व्यवहार स्त्री के लिए सामाजिक आलोचना का कारण बन सकता है। इस प्रकार पितृसत्ता केवल पुरुष और स्त्री के बीच सत्ता का संबंध नहीं है; यह सामाजिक मूल्यों और मानदंडों के माध्यम से भी संचालित होती है। स्त्री स्वयं भी कई बार उन्हीं मानदंडों को स्वीकार कर लेती है जिनसे उसकी स्वतंत्रता सीमित होती है। 'तीसरे लोग' में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न इसी पृष्ठभूमि में अर्थ ग्रहण करता है। स्त्री के सामने उपस्थित सामाजिक दबाव उसके व्यक्तिगत जीवन को प्रभावित करते हैं और जब वह उन दबावों को पहचानने लगती है, तो उसकी चेतना प्रतिरोध का आधार बनती है।

भारतीय समाज में परिवार स्त्री के जीवन की सबसे प्रभावशाली संस्थाओं में से एक है। परिवार स्त्री को भावनात्मक संबंध, सामाजिक सुरक्षा और पहचान प्रदान करता है, लेकिन इसी के साथ परिवार उसकी भूमिका और व्यवहार के लिए अनेक सीमाएँ भी निर्धारित करता है। स्त्री से परिवार के प्रति त्याग और समर्पण की अपेक्षा की जाती है। परिवार की प्रतिष्ठा को बनाए रखने की जिम्मेदारी भी अनेक बार स्त्री के व्यवहार से जोड़ दी जाती है। परिणामतः स्त्री के व्यक्तिगत निर्णयों का मूल्यांकन केवल उसके अपने जीवन के संदर्भ में नहीं, बल्कि पूरे परिवार की सामाजिक

प्रतिष्ठा के संदर्भ में किया जाता है। 'तीसरे लोग' में स्त्री की अस्मिता को समझने के लिए परिवार को इसी द्विधात्मक संदर्भ में देखना आवश्यक है। परिवार एक ओर उसके व्यक्तित्व-निर्माण का आधार है, तो दूसरी ओर वह उसकी स्वतंत्रता को नियंत्रित करने वाली संरचना भी बन सकता है। स्त्री जब अपनी इच्छा, विचार या निर्णय को महत्व देती है, तो परिवार के भीतर संघर्ष उत्पन्न हो सकता है। यही संघर्ष उसके आत्मबोध को गहरा करता है। वह यह समझने लगती है कि सामाजिक भूमिका और व्यक्तिगत अस्तित्व में अंतर है।

भारतीय सामाजिक संरचना में विवाह केवल दो व्यक्तियों का संबंध नहीं, बल्कि एक व्यापक सामाजिक संस्था है। विवाह के साथ स्त्री से जुड़ी अनेक भूमिकाएँ स्वतः निर्धारित हो जाती हैं। पत्नी और बहू की भूमिका में उससे समायोजन, त्याग और परिवार-केंद्रित जीवन की अपेक्षा की जाती है। विवाह संस्था के भीतर स्त्री की अस्मिता का प्रश्न इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है कि उसे अपने व्यक्तित्व और सामाजिक भूमिका के बीच संतुलन बनाना पड़ता है। यदि उसकी स्वतंत्र इच्छाएँ सामाजिक अपेक्षाओं से टकराती हैं, तो उसके सामने सामाजिक दबाव और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच चयन की स्थिति उत्पन्न होती है। 'तीसरे लोग' में स्त्री के जीवन को इस संदर्भ में देखने पर यह समझा जा सकता है कि व्यक्तिगत संबंधों के भीतर भी सत्ता-संबंध सक्रिय होते हैं। प्रेम, विवाह और परिवार जैसे संबंध केवल भावनात्मक नहीं होते; उनके भीतर सामाजिक मानदंड और अपेक्षाएँ भी काम करती हैं।

स्त्री-अस्मिता की सबसे महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियों में आत्मनिर्णय की क्षमता शामिल है। जब स्त्री अपने जीवन से संबंधित निर्णय स्वयं लेने की इच्छा व्यक्त करती है, तब वह अपनी स्वतंत्र पहचान को स्थापित करने की दिशा में कदम उठाती है। आत्मनिर्णय का संबंध शिक्षा, रोजगार, विवाह, संबंध, जीवन-शैली और व्यक्तिगत आकांक्षाओं से हो सकता है। यह प्रश्न केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता का नहीं है; यह सामाजिक सत्ता-संबंधों से भी जुड़ा है। 'तीसरे लोग' में स्त्री के आत्मनिर्णय को सामाजिक अपेक्षाओं के संदर्भ में समझना आवश्यक है। स्त्री यदि स्थापित मानदंडों से अलग कोई निर्णय लेती है, तो समाज उसे केवल व्यक्तिगत चुनाव के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसके निर्णय का नैतिक मूल्यांकन भी करता है। यहीं से स्त्री-अस्मिता का संघर्ष प्रारंभ होता है। स्त्री को यह तय करना होता है कि वह सामाजिक स्वीकृति को प्राथमिकता देगी या अपने अस्तित्व और आत्मसम्मान को।

स्त्री चेतना किसी एक घटना का परिणाम नहीं होती। वह जीवन के अनुभवों से धीरे-धीरे विकसित होती है। भेदभाव, असमानता, सामाजिक दबाव और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच का तनाव स्त्री को अपनी स्थिति पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है। जब स्त्री यह समझने लगती है कि उसकी समस्याएँ केवल व्यक्तिगत नहीं हैं, बल्कि व्यापक सामाजिक व्यवस्था का परिणाम हैं, तब उसके भीतर सामाजिक चेतना विकसित होती है। यही चेतना उसे प्रश्न करने की शक्ति देती है। 'तीसरे लोग' में स्त्री के अनुभवों को इस प्रक्रिया के संदर्भ में देखा जा सकता है। स्त्री अपने जीवन की परिस्थितियों को स्वीकार करने के बजाय उन्हें समझने और उनका अर्थ निर्धारित करने का प्रयास करती है। इस प्रक्रिया में उसकी भूमिका पीड़ित से सक्रिय चेतन व्यक्ति की ओर परिवर्तित होती है।

स्त्री का प्रतिरोध हमेशा प्रत्यक्ष विद्रोह के रूप में सामने नहीं आता। वह अपनी बात कहने, किसी निर्णय को अस्वीकार करने, आत्मनिर्भर बनने, मौन असहमति व्यक्त करने अथवा अपनी स्वतंत्र पहचान कायम करने के रूप में भी सामने आ सकता है। 'तीसरे लोग' में स्त्री के प्रतिरोध को इसी व्यापक अर्थ में देखना चाहिए। उसका संघर्ष किसी एक व्यक्ति के विरुद्ध नहीं, बल्कि उन सामाजिक धारणाओं के विरुद्ध भी हो सकता है जो उसे सीमित

करती हैं। स्त्री का प्रतिरोध तभी सार्थक होता है जब वह उसके आत्मबोध से जुड़ता है। अपने जीवन को स्वयं समझने और उसकी दिशा तय करने की आकांक्षा ही अस्मिता-निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाती है।

उपन्यास के शीर्षक में 'तीसरे लोग' की संकल्पना विशेष ध्यान आकर्षित करती है। 'तीसरा' होना मुख्यधारा से दूरी, अलगाव या सामाजिक स्वीकार्यता की सीमित स्थिति का संकेत माना जा सकता है। इस अवधारणा को स्त्री के संदर्भ में पढ़ने पर स्त्री-अस्मिता और हाशियाकरण का संबंध स्पष्ट होता है। मुख्यधारा की सामाजिक व्यवस्था में स्त्री की स्थिति हमेशा समान नहीं होती। वर्ग, आर्थिक स्थिति, शिक्षा, पारिवारिक पृष्ठभूमि और अन्य सामाजिक परिस्थितियाँ उसके अनुभव को प्रभावित करती हैं। इसलिए स्त्री के हाशियाकरण को एकरेखीय रूप में नहीं देखा जा सकता।

इस दृष्टि से 'तीसरे लोग' स्त्री की स्थिति को सामाजिक केंद्र और हाशिये के बीच के संबंधों के माध्यम से समझने का अवसर देता है। स्त्री की अस्मिता का संघर्ष केवल अपने लिए स्थान बनाने का संघर्ष नहीं है, बल्कि सामाजिक पहचान और सम्मान प्राप्त करने का भी संघर्ष है।

आर्थिक स्थिति स्त्री की सामाजिक अस्मिता का महत्वपूर्ण आधार है। आर्थिक निर्भरता अनेक बार स्त्री की निर्णय-क्षमता को सीमित करती है। इसके विपरीत आर्थिक आत्मनिर्भरता उसे अपने जीवन के संबंध में अधिक स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता प्रदान कर सकती है। हालाँकि आर्थिक स्वतंत्रता अपने आप में पूर्ण मुक्ति की गारंटी नहीं है। सामाजिक रूढ़ियाँ, पारिवारिक दबाव और लैंगिक भूमिकाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र स्त्री को भी प्रभावित कर सकती हैं। इसलिए स्त्री-अस्मिता का प्रश्न आर्थिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक और मानसिक स्वतंत्रता से भी जुड़ा है। 'तीसरे लोग' के अध्ययन में आर्थिक परिस्थितियों को स्त्री की सामाजिक स्थिति के व्यापक संदर्भ में देखना उपयोगी होगा। स्त्री की आर्थिक स्थिति उसके संबंधों, आत्मसम्मान और निर्णय-क्षमता को प्रभावित करने वाले कारकों में से एक है।

स्त्री-अस्मिता की स्थापना में अपनी आवाज का महत्व अत्यंत अधिक है। जब स्त्री स्वयं अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करती है, तब वह अपने जीवन की व्याख्या करने का अधिकार भी प्राप्त करती है। साहित्य में स्त्री की आवाज केवल उसके दुखों का वर्णन नहीं करती, बल्कि वह सामाजिक संरचना की आलोचना भी कर सकती है। स्त्री की दृष्टि से देखी गई दुनिया पुरुष-केंद्रित सामाजिक दृष्टि से अलग हो सकती है। 'तीसरे लोग' के संदर्भ में स्त्री अनुभवों की अभिव्यक्ति को इस दृष्टि से देखा जा सकता है। स्त्री की संवेदना, उसकी इच्छाएँ, उसकी असहमति और उसके संघर्ष कथा को एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। इस प्रकार भाषा और कथन-शैली स्त्री-अस्मिता के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। स्त्री जब बोलती है, प्रश्न करती है और अपने अनुभवों को अर्थ देती है, तब वह अपने अस्तित्व को भी पुनर्परिभाषित करती है।

समाज में नैतिकता के मानदंड सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू नहीं होते। कई परिस्थितियों में स्त्री के व्यवहार को अधिक कठोर नैतिक कसौटियों पर परखा जाता है। उसके व्यक्तिगत निर्णयों को परिवार और समाज की प्रतिष्ठा से जोड़ दिया जाता है। यह दोहरा मानदंड स्त्री-अस्मिता के विकास में बाधा उत्पन्न करता है। स्त्री को अपने निर्णयों के लिए सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करने की अतिरिक्त चुनौती का सामना करना पड़ता है। 'तीसरे लोग' में स्त्री की सामाजिक स्थिति को इस नैतिक संरचना के संदर्भ में पढ़ना महत्वपूर्ण है। स्त्री के व्यक्तिगत जीवन को जब सामाजिक नैतिकता नियंत्रित करने लगती है, तब उसका निजी अस्तित्व सार्वजनिक मूल्यांकन का विषय बन जाता है। ऐसी स्थिति में स्त्री का अपने निर्णयों पर अधिकार स्थापित करना अस्मिता-संघर्ष का रूप ग्रहण

करता है।

स्त्री-अस्मिता का विकास केवल संघर्ष की कहानी नहीं है। यह आत्मबोध की प्रक्रिया भी है। स्त्री जब अपने जीवन की परिस्थितियों को पहचानती है, अपने अनुभवों को समझती है और अपनी इच्छाओं को महत्व देती है, तब उसके भीतर आत्मविश्वास विकसित होता है। 'तीसरे लोग' में स्त्री को इस विकासशील प्रक्रिया के संदर्भ में देखा जा सकता है। वह सामाजिक संरचना द्वारा निर्धारित भूमिकाओं को समझते हुए अपनी स्वतंत्र पहचान की तलाश करती है। इस प्रक्रिया में संघर्ष स्वाभाविक है, क्योंकि अस्मिता की स्थापना स्थापित सत्ता-संबंधों को चुनौती देती है। लेकिन इसी संघर्ष से परिवर्तन की संभावना भी जन्म लेती है।

'तीसरे लोग' की प्रासंगिकता केवल उसके कथानक या पात्रों तक सीमित नहीं है। स्त्री की पहचान, सामाजिक स्वीकार्यता और आत्मनिर्णय के प्रश्न आज भी सामाजिक विमर्श के महत्वपूर्ण विषय हैं। समकालीन समाज में स्त्री की शिक्षा, रोजगार और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी बढ़ी है, लेकिन इसके बावजूद लैंगिक भूमिकाओं और सामाजिक अपेक्षाओं का प्रभाव बना हुआ है। आधुनिकता और परंपरा के बीच का तनाव स्त्री के जीवन में अनेक रूपों में दिखाई देता है। इस संदर्भ में 'तीसरे लोग' का अध्ययन यह समझने में सहायक हो सकता है कि स्त्री की स्वतंत्रता का प्रश्न केवल कानूनी या आर्थिक अधिकारों तक सीमित नहीं है। सामाजिक मानसिकता और संबंधों की संरचना में परिवर्तन भी आवश्यक है।

गीतांजलि चटर्जी का 'तीसरे लोग' स्त्री-अस्मिता और सामाजिक संरचना के परस्पर संबंध को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण पाठ प्रस्तुत करता है। उपन्यास में स्त्री का प्रश्न केवल व्यक्तिगत दुख, पारिवारिक समस्या या पुरुष-स्त्री संबंध तक सीमित नहीं है, बल्कि वह व्यापक सामाजिक संरचना, सत्ता-संबंधों और पहचान के प्रश्न से जुड़ा है। स्त्री-अस्मिता का मूल आधार आत्मबोध, आत्मसम्मान और आत्मनिर्णय है। जब स्त्री अपनी पहचान को केवल पारिवारिक संबंधों के आधार पर स्वीकार करने के बजाय अपने स्वतंत्र अस्तित्व को पहचानती है, तब वह सामाजिक संरचना के उन पक्षों को चुनौती देती है जो उसकी स्वतंत्रता को सीमित करते हैं। उपन्यास के संदर्भ में परिवार एक जटिल संस्था के रूप में सामने आता है। वह स्त्री को संबंध और सुरक्षा प्रदान करता है, लेकिन साथ ही सामाजिक भूमिकाओं और अपेक्षाओं के माध्यम से उसके जीवन को नियंत्रित भी कर सकता है। इसी प्रकार विवाह संस्था स्त्री के लिए सामाजिक पहचान का आधार होने के साथ-साथ उसके आत्मनिर्णय की परीक्षा का क्षेत्र भी बनती है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था स्त्री की अस्मिता को सीमित करने वाली प्रमुख सामाजिक संरचनाओं में से एक है। किंतु स्त्री को केवल पीड़ित के रूप में देखना उसके व्यक्तित्व की सक्रियता को कम करके देखना होगा। स्त्री अपने अनुभवों से चेतना विकसित करती है और उस चेतना के आधार पर प्रश्न, असहमति और प्रतिरोध की राह तलाशती है। 'तीसरे लोग' के शीर्षक को हाशियाकरण की व्यापक अवधारणा से जोड़कर देखने पर स्त्री-अस्मिता का प्रश्न और अधिक व्यापक हो जाता है। सामाजिक मुख्यधारा में स्थान प्राप्त करना केवल सामाजिक स्वीकृति का प्रश्न नहीं, बल्कि सम्मान, पहचान और निर्णय की स्वतंत्रता का भी प्रश्न है।

निष्कर्ष

अतः यह कहा जा सकता है कि 'तीसरे लोग' में स्त्री-अस्मिता को सामाजिक संरचना से अलग करके नहीं समझा जा सकता। स्त्री का व्यक्तित्व परिवार, सामाजिक नैतिकता, लैंगिक भूमिकाओं और सत्ता-संबंधों के बीच निर्मित होता है। इन संरचनाओं के भीतर वह अपने अस्तित्व को पहचानती और पुनर्परिभाषित करती है। यही प्रक्रिया स्त्री-अस्मिता को व्यक्तिगत अनुभव से सामाजिक चेतना में परिवर्तित करती है। इस दृष्टि से उपन्यास का महत्व इस बात में है

कि यह स्त्री को केवल सामाजिक व्यवस्था की निष्क्रिय इकाई के रूप में नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व को समझने और उसके लिए स्थान निर्मित करने वाली चेतन मानवीय उपस्थिति के रूप में देखने का अवसर प्रदान करता है। स्त्री-अस्मिता का संघर्ष अंततः समानता, सम्मान और मानवीय गरिमा की स्थापना का संघर्ष है।

संदर्भ सूची

1. चटर्जी, गीतांजलि — 'तीसरे लोग', संबंधित संस्करण एवं प्रकाशक।
2. देसाई, नेरा एवं मैत्रेयी कृष्णराज — Indian Women.
3. Beauvoir, Simone de — The Second Sex.
4. Butler, Judith — Gender Trouble: Feminism and the Subversion of Identity.
5. पाण्डेय, मैनेजर — साहित्य और समाजशास्त्र।
6. हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श से संबंधित आलोचनात्मक ग्रंथ एवं शोध-पत्र।
7. स्त्री-अस्मिता, पितृसत्ता और सामाजिक संरचना से संबंधित समाजशास्त्रीय एवं साहित्यिक अध्ययन।